Opinions Women

"तुम आदिवासी हो मगर लगती तो नहीं हो": शिक्षण संस्थानों में आदिवासी स्त्री संघर्ष

August 25, 2019 Neetisha Xalxo 0 Comments आदिवासी स्त्री, जातिगत भेदभाव

Share

Author Recent Posts

Neetisha Xalxo

रांची, झारखण्ड की निवासी, नीतिशा कुड़ुख/उरांव समाज से हैं. वह दिल्ली यूनिवर्सिटी के दौलत राम कॉलेज में हिंदी पढ़ाती हैं और साथ ही जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी में पीएचडी (हिंदी) की शोधार्थी हैं.

यह तीन भाग श्रृंखला का पहला लेख है। लेखिका नीतिशा आगामी दूसरे भाग में अपने जेएनयू के अनुभवों के बारे में लिखेंगी, और लेख के अंतिम भाग में अपने कार्यस्थल के अनुभवों पर चर्चा करेंगी।

आज से तीन महीने पहले, 22 मई को, 26 वर्षीय मेडिकल स्टूडेंट डॉ पायल ताडवी ने अपनी तीन सीनियर डॉक्टर्स की प्रताड़ना के कारण आत्महत्या कर ली। लेकिन यह एक “आत्महत्या” नहीं बल्कि यह एक सांस्थानिक हत्या थी। हिन्दू धर्म की जाति व्यवस्था के बाहर होने के बावजूद, आदिवासी समाज महिलाएं ऐसी परिस्थितियां झेलती रही हैं, जिसमे ऊंची जाति की महिलाएं अन्य उपेक्षित समाज की महिलाओं के साथ क्रूर और अमानवीय व्यवहार करती रही हैं। इस तरह की हिंसा, ब्राह्मणवादी पितृसत्ता की व्यवस्था का एक उपयुक्त उदहारण है।

झारखंड में पैदा होने वाले ज़्यादातर आदिवासी छात्रों को भेदभाव और घृणा का सामना तब ही से होता है जब वे स्कूल के प्रांगण में क़दम रखते हैं। जिस स्कूल में मैंने पढ़ाई की वहां काम कर रहे ज़्यादार सिस्टर्ज आदिवासी समुदाय से थीं। परंतु स्कूलों में जो बात मैंने महसूस किया वह बड़ी अफसोसनाक थी। हिंदू सवर्ण जाति से आने वाले छात्रों के अंदर आदिवासी शिक्षिकाओं व सिस्टर्स को लेकर बहुत तरह का पूर्वग्रह पाया जाता था। उनको लगता था ब्राह्मण जाति में पैदा लेने वाले

शिक्षक ही ज्ञान के भंडार होते हैं। वही सब जानते हैं। बाकी को या तो कम आता है या कुछ नहीं आता है।

सवर्ण हिंदू जातियों के वैचारिक दबदबे का अंदाज़ा आप इस बात से लगा सकते हैं कि खुद आदिवासी शिक्षक भी इस बात को दोहराते फिरते थे कि हिंदू छात्र खूब मेहनती और तेज होते हैं, वहीं आदिवासी छात्र उनसे थोड़ा कम मेहनती होते हैं। रिजल्ट के दिन कक्षा 6 से 10 तक में पहला दूसरा और तीसरा स्थान पाने में सवर्ण छात्र ही आगे रहते थे। इनाम पाने में कुछ आदिवासी नाम भी पुकारे जाते थे। लेकिन जब खेल कूद, नित्य, संगीत और एक्स्ट्रा करिकुलर एक्टिविटी के क्षेत्र में इनाम बांटे जाते थे तो वहां सिर्फ आदिवासी बच्चे दिखाए देते थे। मगर ब्राह्मणवादी समाज में इज्जत तो मानसिक श्रम को ही मिलती है। लिहाज़ा खेल कूद में कामयाब आदिवासी समाज के बच्चों को ब्राह्मणवादी निज़ाम अहमियत नहीं देता है।

> ***मैं ही नहीं लाखों करोड़ों आदिवासी छात्र किसी न किसी रूप में ब्राह्मणवादी घृणा और हिंसा के शिकार हैं। उनको हर रोज़ जाति-समाज उनको "असभ्य" होने का ऐहसास दिलाता है। हर मोड़ हर मकाम पर उनके साथ भेद भाव बरता जाता। ज़रूरत इस बात की है कि इन समाजिक बुराई और गैर बराबरी पर खुल कर बातचीत हो और उसे जड़ से ख़त्म करने के लिए हर तरफ से प्रयास हो।***

इस के अलावा कुछ समस्याएं और भी थी। हिन्दू धर्म बनाम ईसाई धर्म के ठेकेदारों के बीच चल रही रस्साकसी में पीड़ित वह हुए जो न तो अपने आप को हिन्दू मानते थे और न ही इसाई। मैंने एक तल्ख़ बात यह महसूस की कि जो बच्चे ईसाई न थे उनको ईसाई सिस्टरज प्यार और दुलार करने में कंजूसी करती थीं। किंतु यह भी सच है कि इस तरह का सौतेला सलूक सब नहीं करती थी। कुछ सिस्टर्ज़ जैसे

सिस्टर फ्लोरा और सिस्टर मेरी ग्रेस टोप्पो ने सब को दुलार किया और उनका प्यार मुझे भी काफी मिला। आज जो भी में हूं उसमें उनका बड़ा योगदान है।

मुझे यह भी याद है स्कूल में आदिवासी छात्रों के लिए बच्चों के एक क्रिश्चयन संस्था मेरे स्कूल को दोपहर का खाना व कुछ सामान देती थी, जिनमें अंडा, चिकन, मटन, बीफ आदि शामिल था। जब खाना परोसा जाता था तो सवर्ण हिंदू छात्र इन मांसाहारी भोजन के प्रति घृणा की नज़र से देखते थे।

ब्राह्मण समाज की इसी पवित्र और अपवित्र के विचार ने स्कूल में बंधुत्व को कभी फलने-फूलने नहीं दिया। यही वजह है कि मेरे स्कूल में हिंदू और आदिवासी छात्रों के बीच एक साथ खाने पीने का प्रचलन न के बराबर था। खान-पान और रहन-सहन के मामले में वह अपने आप को दूसरों से अलग रखते थे। उनके अंदर श्रेष्ठता की भावना कुट कूट कर भरी थी। बाबासाहेब आंबेडकर ने भी तो इसी बात पर चिंता ज़ाहिर की है कि जाति- समाज में न तो अंतर जाति- शादी ब्याह ही होते हैं और न खान पान। यही वजह है कि आंबेडकर और भारत का बहुजन समाज की नज़र से, “जाति” भारतीय समाज के पिछड़ेपन और जड़ता की सबसे बड़ी वजह है।

सवर्ण जाति के लोगों द्वारा भेदभाव का पीड़ादायक अनुभव मेरा पीछा करते हुए दिल्ली तक पहुंच गया। ग्रेजुएशन पूरा करने के लिए मैं देश के प्रतिष्ठत दिल्ली विश्वविद्यालय के हंसराज महाविद्यालय पहुंची। यहीं इतिहास की क्लास में एक शिक्षक ने कहा कि “विश्व में कई ऐसे मानव समुदाय अस्तित्व में थे जिन्होंने पृथ्वी के अस्तित्व को बचाने में बड़ी भूमिका अदा की है। उन्होंने प्रकृति से उतना ही लिया जिनसे उनका जीवन आसानी से चल सके। प्रकृति के संसाधन का इस्तेमाल वे अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए करते थे। प्रकृति का दोहन उन्होंने कभी नहीं किया जैसा कि आधुनिक और विकसित समाज में देखने को मिलता है।

जंगल, नदियां, पहाड़, जानवर सभी कुछ उनके लिए पूजनीय थे। वे प्रकृति के सबसे बड़े संरक्षक थे।"

इन बातों को सुनकर मैंने अपनी प्रतिक्रिया दी और कहा, "जिन मानव समुदाय के बारे में आप पढ़ा रहे हैं वह आज भी उसी तरह से ज़िन्दगी बसर कर रहा है। आज भी आदिवासी समाज कुदरत की गोद में जी रहा है और उसकी जीवन शैली पूरी तरह से प्रकृति के अनुरूप है।"

फिर मैंने अपना परिचय देते हुए कहा कि "मेरे नाम के साथ खलखो जुड़ा हुआ है जिसका अर्थ छोटी मछली होता है। छोटी मछली को मैं नहीं मार सकती ना कभी खा सकती। खलखो समाज जिसमें मैंने जनम लिया है उसकी यह जिम्मेवारी है कि इसके अस्तित्व को पृथ्वी पर सदा बनाए रखें। मेरी मां के नाम में लकड़ा जुड़ा है जिसका मतलब बाघ होता है। लिहाज़ा हम सब बाघ तक को हानि नहीं पहुंचा सकते। इस तरह हमारा आदिवासी समाज आज भी पृथ्वी की पारिस्थितिकी या ईको सिस्टम हमेशा बरकरार रखने के लिए प्रयत्नशील है।" यह सब सुनकर मेरे शिक्षक बहुत खुश हुए और कहा कि "जिस समाज के बारे में हमसब पढ़ रहे हैं, उस समाज से कोई पढ़ने आया है।" आखिर में उन्होंने मेरी खूब पीठ थपथपाई।

> ***"तुम आदिवासी हो मगर लगती तो नहीं हो।" इसका अर्थ मुझे शुरू में समझ में नहीं आया। जाति-समाज के दिमाग में यह पूर्वग्रह ग्रसित कर बैठा है कि "आदिवासी काले, बड़े-बड़े दांत वाले, असभ्य सी भाषा बोलने वाले, झिंगालाला करने और कच्चा मांस खाने वाले होते हैं।"***

मुझे इस बात का थोड़ा भी अहसास नहीं था कि मेरी आईडेंटिटी जानकर मेरे साथ बुरा बरताव होने वाला था। मेरी अवहेलना शुरू हो गई। क्लास के बाद मुझे कुछ ने कहा कि "तुम आदिवासी हो मगर लगती तो नहीं हो।" इसका अर्थ मुझे शुरू में

समझ में नहीं आया। जाति-समाज के दिमाग में यह पूर्वग्रह ग्रसित कर बैठा है कि "आदिवासी काले, बड़े-बड़े दांत वाले, असभ्य सी भाषा बोलने वाले, झिंगालाला करने और कच्चा मांस खाने वाले होते हैं।"

दर हकीकत इस पूर्वाग्रह के लिए वह खुद जिम्मेदार नहीं हैं। हिंदू ग्रंथों, टेलीविजन, सहित, समाज विज्ञान, सिनेमा ने अब तक आदिवासी को नकारात्मक तौर से पेश किया है। एंथ्रोपोलॉजी और सोशियोलॉजी के विद्वानों ने भी आदिवासियों का स्ट्रियोटाइप गढ़ने में बड़ा रोल अदा किया है। इसी स्टरियोटाइप से ग्रसित ही कर मेरे कॉलेज के दोस्तों ने मेरे साथ टिफिन खाना बंद कर दिया। उन्हें अब मैं उनके जैसा नहीं लगने लगी। उनके नजदीक मेरी एक ही पहचान थी। उन्होंने मेरे टिफिन में रखे हरे मूंग का स्प्राउट्स देखकर कहना शुरू कर दिया था कि "आदिवासी तो हर चीज को कच्चा ही खाते हैं ना।"

उनके इस भेदभावपूर्ण रवैए ने मुझे अन्दर से काफी दुखी किया। कॉलेज की बड़ी भीड़ में, मैं खुद को अकेला पाने लगी थी। मेरा आदिवासी आईडेंटिटी उनको इस लिए भी परेशान कर रहा था कि आदिवासी को आरक्षण मिलता है। आरक्षण से जुड़ी हुई बहुत सारी गलतफहमियों उनके दिमाग में भी बैठी हुई थी। कोई कहता, "तुम्हारा 58% में दाखिला हुआ और हमारे कई ब्राह्मण दोस्तों का 65% के बाद भी एडमिशन नहीं हो सका। तुमने उनका हक मारा है।"

जवाब देते हुए मैंने कहा कि "मेरा 58% में एडमिशन है और तुम्हारा 65% से। माना कि एंट्री गेट पर यह मुझे रियायत मिली। चलो अब साथ साथ पढ़ते हैं और देखते हैं कि जब समान शिक्षा हम दोनों को मिलने लगी है तो साल के आखिर में कौन ज़्यादा नंबर लता है।" पहले वर्ष में 60 प्लस की क्लास में मात्र 5 बच्चों को प्रथम श्रेणी प्राप्त हुई जिनमें से एक मैं भी एक थी। साल गुजरता गया और मेरे अंक बढ़ते गए। उनका भ्रम टूट लगा कि आदिवासी पढ़ नहीं सकते और अच्छे अंक नहीं ला सकते।

मेरे आदिवासी होने के नाते मेरे कुछ बिहार से आने वाले अगड़ी जातियों के दोस्तों ने मुझे "माओवादी" होने का लेबल लगा रखा था। मैंने पहली बार उनके मुंह से कानू सन्याल और चारू मजूमदार का नाम सुना था। उनके नाम से में पहली बार दिल्ली में ही परिचित हुई क्योंकि रांची में रहते हुए हमने सिर्फ एमसीसी ही सुना था। कभी इसका फुल फॉर्म की तरफ सोचा भी नहीं था। मेरे दोस्त ने मुझसे यह भी पूछा कि "तुमने विवेकानंद और रवीन्द्र नाथ टैगोर को पढ़ा है या नहीं?" मैंने जवाब दिया, "हां नहीं पढ़ा है।" इस पर उसका जवाब था कि, "हां तुम झारखंडी लोग कहां इनको पढ़ोगे। तुम तो कानू सन्याल और चारू मजूमदार को पढ़ने वाले लोग हो।"

उनके जवाब से परेशान हो कर उस शाम हॉस्टल की एक बड़ी दीदी के पास जाकर मैंने इन दोनों नामों के बारे में पूछा। मुझे बताया गया कि नक्सलबाड़ी आंदोलन के दौरान कानू सन्याल और चारू मजूमदार काफी सक्रिय थे। मैं ही नहीं लाखों करोड़ों आदिवासी छात्र किसी न किसी रूप में ब्राह्मणवादी घृणा और हिंसा के शिकार हैं। उनको हर रोज़ जाति-समाज उनको "असभ्य" होने का ऐहसास दिलाता है। हर मोड़ हर मकाम पर उनके साथ भेद भाव बरता जाता। ज़रूरत इस बात की है कि इन समाजिक बुराई और गैर बराबरी पर खुल कर बातचीत हो और उसे जड़ से ख़त्म करने के लिए हर तरफ से प्रयास हो।

यह लेख मूल रूप से 1 जून 2019 को स्त्रीकाल में प्रकाशित किया गया था। लेखक की अनुमति से लेख का थोड़ा संपादित संस्करण यहां प्रकाशित किया गया है।

This post has already been read 4097 times!

Share

[← वर्ल्ड इंडिजेनस डे : आखिर क्यों मना रहे हैं हम देशज भाषाओं का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष?]

[नियमगिरि: अस्पताल की जगह तेजी से खुल रही पुलिस छावनियां, हो रही अवैध गिरफ्तारी →]

You May Also Like

Identity in the 21st Century I – Misconceptions

February 5, 2016 4

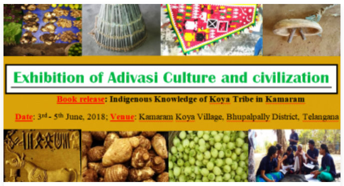

Exhibition of Adivasi Culture and Book release – "Indigenous Knowledge of Koya tribe in Kamaram", Telangana : 3-5 June, 2018

May 11, 2018 0

How long will the 'development' be at the cost of Adivasi lives? : the case of Bhadradri Power Plant

July 29, 2017 0

Leave a reply

Default Comments (0) Facebook Comments

Your email address will not be published. Required fields are marked *

Comment

Name *

Email *

Website

Save my name, email, and website in this browser for the next time I comment.

Notify me of follow-up comments by email.

Notify me of new posts by email.

Post Comment

Follow Us On Facebook

Adivasi Resurgence

Like Page 6.5K likes

Adivasi Resurgence
on Wednesday

"We got the first 5,000 [testing] kits on Friday and that is why our testing has been slow. We have been repeatedly, since March 21, requesting for PPEs from the Centre. There has been an inordinate delay in getting Central help. We are doing everything to contain the pandemic with minimum resources. We are gradually increasing the testing. Jharkhand is a poor and a tribal-dominated state and we are facing a huge shortage of money. The Centre is not helping us with any financial assistance. On top of that, public sector undertakings are not clearing our dues amounting to several thousands of crores. The high court has asked us to specify the measures we have taken to fight the Covid-19. In times like this, it becomes extremely difficult to

Follow us on Twitter

Adivasi Resurgence Follow

An news/media website for the Adivasi (Indigenous) people of India | https://t.co/csyqvHEvhv...

Adivasi Resurgence Retweeted

Jharkhand Janadhikar Mahasabha
@JharkhandJanad1 · 8 Apr

Despite being entitled for Antyoday card & pension, PVTG Vinod Korwa's family (Ranka's Siraikela) has none of the two & is facing hunger. Jharkhand govt should implement a relief package for PVTGs comprising adequate grains, pulses, vegetables, oil, cash grant, soap & medicines.

18 23 Twitter

Adivasi Resurgence Retweeted

Jharkhand Janadhikar Mahasabha
@JharkhandJanad1 · 8 Apr

Archive

Select

Useful Links

Adivaani

Tribal Intellectual Collective India

Roundtable India

Ministry of Tribal Affairs

Copyright © 2020 Adivasi Resurgence. All rights reserved.
Theme: ColorMag by ThemeGrill. Powered by WordPress.